NEW ERA AGRICULTURE MAGAZINE

जलवायु परिवर्तन के संबंध में हिमाचल प्रदेश का कृषि पर प्रभाव एवं वैज्ञानिक तरीकों से कृषि में जल प्रबंधन

सरोज कुमारी[1], रणबीर सिंह राणा[2], अवनी सूद[3], रानू पठानिया[4], स्मृति शर्मा[5]

परिचय:

जलवायु परिवर्तन 21वीं सदी की सबसे गंभीर चुनौती बन चुका है। इसका प्रभाव न केवल पर्यावरण और जैव विविधता पर पड़ रहा है, बल्कि कृषि जैसे जीवन–निर्भर क्षेत्र पर भी गहरा असर डाल रहा है। भारत का पहाड़ी राज्य हिमाचल प्रदेश, जहाँ की 90 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है, इस परिवर्तन के प्रति अत्यधिक संवेदनशील है। यहाँ की कृषि पारंपरिक है और वर्षा पर आधारित है, इसलिए जलवायु परिवर्तन से होने वाली असामान्यता जैसे वर्षा की अनियमितता, तापमान में वृद्धि, और बर्फबारी में कमी कृषि उत्पादन एवं आजीविका दोनों को प्रभावित कर रही है।

हिमाचल प्रदेश पश्चिमी हिमालय का पर्वतीय राज्य है। यह राज्य समुद्रतल से 350 मीटर से 7000 मीटर की ऊँचाई के मध्य स्थित है। इस प्रदेश में विभिन्न भू–दृश्य जलवायु को प्रभावित करते हैं। जंगल, पहाड़, झरने, नदियाँ तथा झीलें इस प्रदेश की मुख्य विशेषता है। प्रदेश के हिमनदों से कई बड़ी नदियाँ निकलती हैं। यह नदियाँ घाटियों में बहती हुई निचले मैदानी क्षेत्र पंजाब, हरियाणा और राजस्थान के खेतों की सिंचाई का प्रमुख स्त्रोत है। बड़ी नदियों के अलावा हिमाचल प्रदेश में असंख्य छोटी जलधाराएं हैं जिनमें वर्ष भर पानी भरा रहता है। राज्य की नदियों में 60–70 प्रतिशत जल झीलों और हिमखंडों से आता है, जो बागवानी तथा सब्जियों की खेती को प्रभावित करता है। कृषि के क्षेत्र में जल एक महत्बपूर्ण जलवायु कारक है। यह पौधों की वृद्धि और विकास को निर्धारित करता है। इसकी उपलब्धता या कमी सफल फसल या उपज में कमी या कुल विफलता का कारण बन सकती है। सिंचाई से आमतौर पर खेती की पैदावार दोगुना हो जाती है और एक साल में उगाई जाने वाली फसलों की सख्यां एक से दो गुणा तक बढ़ जाती है। जल, प्रकाश संश्लेष्ण की प्रक्रियाओं में मदद करता है जिसके द्वारा पौधा अपना भोजन तैयार करता है। जल पोषक तत्वों और खनिजों के परिवहन में मदद करता है। पानी संयंत्र के ऊतको के लिए उपयुक्त दबाव उपलब्ध कराने, संयंत्र की संरचना के रखरखाव में मदद करता है।

सरोज कुमारी[1], रणबीर सिंह राणा[2], अवनी सूद[3], रानू पठानिया[4], स्मृति शर्मा[5]

[1]पीएचडी शोध छात्रा, सस्य विज्ञान विभाग,

[2]प्रधान वैज्ञानिक, सस्य विज्ञान विभाग,

[3]पीएचडी शोध छात्रा, सस्य विज्ञान विभाग,

[4]सहायक प्राध्यापिका, सस्य विज्ञान विभाग,

[5]एम. एस सी. शोध छात्रा, सस्य विज्ञान विभाग,

चौधरी सरवण कुमार हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय, पालमपुर (हिमाचल प्रदेश), भारत

हिमाचल प्रदेश में जलवायु परिवर्तन की वर्तमान स्थिति

औसत तापमान में वृद्धि – पिछले कुछ दशकों में हिमाचल प्रदेश का औसत वार्षिक तापमान लगभग 0.6–1.0 डिग्री सेल्सियस बढ़ा है।

अनियमित वर्षा और बर्फबारी– मानसून की अनिश्चितता, कम बर्फबारी और बेमौसम बारिश के कारण कृषि–चक्र प्रभावित हो रहा है।

अचानक मौसम की घटनाएँ – भारी वर्षा, बादल फटना, भूस्खलन जैसी घटनाओं की आवृत्ति बढ़ी है।

जल स्रोतों पर असर – ग्लेशियरों के पिघलने और भूजल स्तर में गिरावट के कारण परंपरागत जल स्रोत जैसे नालों, धाराओं और बावड़ियों में पानी की उपलब्धता कम हो गई है।

कृषि बागवानी कुल क्षेत्रफल और वर्तमान उत्पादन परिदृश्य

कृषि हिमाचल प्रदेश के लोगों का प्रमुख व्यवसाय है और प्रदेश की अर्थव्यवस्था में इसका महत्वपूर्ण स्थान है। राज्य के कुल राज्य घरेलु उत्पादन का लगभग 14 प्रतिशत कृषि तथा इससे सम्बंधित क्षेत्रों से प्राप्त होता है। प्रदेश के कुल 55.67 लाख हैक्टेयर भौगोलिक क्षेत्र में से 9.55 लाख हैक्टेयर क्षेत्र में 9.61 लाख किसान खेती करते हैं। प्रदेश में औसतन जोत का आकार 1.00 हैक्टेयर है। कुल जोते गए क्षेत्र में से 80 प्रतिशत क्षेत्र वर्षा पर आधारित है। चावल, गेहूँ तथा मक्की राज्य की मुख्य खाद्य फसलें हैं। मूंगफली, सोयाबीन तथा सूरजमुखी खरीफ मौसम की तथा तिल, सरसों और तोरिया रबी मौसम की प्रमुख तिलहन फसलें हैं। उडद, मूंग, राजमाह राज्य में खरीफ तथा चना, मसूर रबी की प्रमुख दलहन फसलें हैं। कृषि जलवायु के अनुसार राज्य को चार क्षेत्रों में बांटा जा सकता है।

1. उपोष्णीय, उच्च पर्वतीय निचले पहाडी क्षेत्र।
2. उच्च समशीतोष्ण नमी वाले मध्य पर्वतीय क्षेत्र।
3. नमी वाले ऊँचे पर्वतीय क्षेत्र।
4. शुष्क तापमान वाले ऊँचे पर्वतीय क्षेत्र व शीत मरूस्थल।

प्रदेश की जलवायु बीज आलू, अदरक और बेमौसमी सब्जियों के उत्पादन के लिए बहुत ही उपयुक्त है।

फसल उत्पादन – हिमाचल प्रदेश की अर्थव्यवस्था मुख्यता कृषि पर निर्भर करती है। वर्ष 2013–14 में कृषि तथा उससे सम्बंधित क्षेत्रों का कुल राज्य घरेलु उत्पादन में लगभग 14 प्रतिशत योगदान है। यह वर्ष कृषि के लिए सामान्य रूप से अच्छा वर्ष होने के कारण, खाद्यान्न उत्पादन वर्ष 2012–13 के 15.41 लाख मीट्रिक टन की तुलना में वर्ष 2013–14 में 15.76 लाख मीट्रिक टन उत्पादन हुआ। वर्ष 2012–13 के 1.83 लाख मीट्रिक टन आलू उत्पादन की तुलना में वर्ष 2013–14 में आलू उत्पादन 2.05 लाख मीट्रिक टन हुआ। सब्जियों का सम्भावित उत्पादन वर्ष 2012–13 के 13.98 लाख मीट्रिक टन की तुलना में वर्ष 2013–14 में 14.30 लाख मीट्रिक टन हुआ।

उद्यान– वर्ष 1950–51 में फलों के अधीन कुल क्षेत्र 792 हैक्टेयर था जिसमें कुल उत्पादन 1,200 टन हुआ। यह बढ़ कर वर्ष

2013–14 में 2,20,706 हैक्टेयर क्षेत्र हो गया तथा कुल फल उत्पादन 8.66 लाख टन हुआ तथा वर्ष 2014–15 में दिसम्बर 2015 तक कुल फल उत्पादन 6.53 लाख टन आंका गया है।

राज्य में पिछले कुछ वर्षों में बढ़ते हुए उत्पादन का मुख्य कारण किसानों को दी गई कृषि बागवानी से सम्बंधित प्रशिक्षण, मौसम की भविष्यवाणी का खेती के लिए सही समय पर उपयोग करना तथा उच्च स्तर की तकनीक के बीज, खाद व कीटनाशक का प्रयोग करना है। प्रगती के साथ पर्यावरण के संरक्षण को भी ध्यान में रखा गया है और किसान को जैविक खेती के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है।

जैविक खेती–कृषि की वह विधि है जो उर्बरकों एवं कीटनाशकों का प्रयोग नहीं करती है तथा जो भूमि की उर्वरा शक्ति को बचाए रखने के लिए हरी खाद, कम्पोस्ट, फस्ल चक्र आदि का प्रयोग करती है। जैविक खेती के निम्नलिखित फायदे हैं।

1. जैविक खाद (कम्पोस्ट, पशु खाद, हरी खाद) आदि का उपयोग करने से मिट्टी की गुणवता बढ़ जाती है। कार्बनिक पदार्थ के स्तर को बनाए रखने से मिट्टी की उर्वरता की लम्बे समय तक रक्षा की जा सकती है। जल संसाधनों को कम प्रदूषित करती है।
2. फलियों और जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण के उपयोग के माध्यम से नाइट्रोजन आत्मनिर्भता बढ़ाती है।
3. खरपतवार, बीमारी एवं कीट नियंत्रण के लिए किसान फसल चक्र, प्राकृतिक परभक्षी, जैविक खाद और प्रतिरोधी किस्मों का उपयोग कर सकता है।
4. हिमाचल प्रदेश में जैविक खेती को प्रोत्साहित करने हेतु सरकारी योजनाओं का संचालन।

कृषि उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए जल संरक्षण और लघु सिंचाई योजनाओं को प्राथमिकता दी गई है। कम पानी उठाने वाले उपकरण व फव्वारों के माध्यम से कुशल सिंचाई प्रणाली को भी अपनाया गया है। सिंचाई की उच्च तकनीक जैसे ड्रिप सिंचाई और बौछारी सिंचाई को उपयोग में लाया जा रहा है।

1. **सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली का प्रयोग** – ड्रिप एवं बौछारी सिंचाई तकनीक से जल की बूँद–बूँद आपूर्ति होती है, जिससे जल की 40–60 प्रतिशत तक बचत होती है। यह प्रणाली विशेष रूप से सब्जियों, बागवानी एवं उच्च मूल्य वाली फसलों में प्रभावी है।

ड्रिप सिंचाई – इस विधि में यंत्र जिन्हें एमीटर कहते हैं, के द्वारा जल धीरे–धीरे लगातार बूंद– बूंद करके या छोटे फुहारे के रुप में पौधों तक प्लास्टिक की पतली नालियों के माध्यम से पहुँचाया जाता है। यह विधि सिंचाई जल की अत्यंत कमी वाले स्थानों पर प्रयोग की जाती है। इस

तकनीक को अपनाने से 50–70 प्रतिशत पानी बचाया जा सकता है।

बौछारी सिंचाई – इस विधी में स्त्रोत में पानी दवाब के साथ खेत में ले जाया जाता है और स्वचालित छिड़काव यंत्र द्वारा पूरे खेत में बौछार द्वारा वर्षा की बूंदों की तरह छिड़का जाता है। इसे ओवर हेड सिंचाई भी कहते हैं। यह तकनीक अपनाने से 25–50 प्रतिशत पानी बचाया जा सकता है। उदाहरण के तौर पर एक हेक्टेयर भूमि को अगर 60 हेक्टेयर से. मी. वर्षा की जरूरत है तो यह पानी की मात्रा 60 लाख लीटर पानी के बराबर हो जाती है। प्रति करनाल यह मात्रा लगभग 2.4 लाख लीटर पानी के बराबर होती है। सिंचाई की उच्च तकनीक जैसे की ड्रिप व बौछारी सिंचाई को उपयोग में लाकर हम 19–20 लाख लीटर पानी बचा सकते हैं।

2. **वर्षा जल संचयन** – छोटे खेत, तालाब, परिरेखा बाँध, जलग्रहण कुंड और चेक डैम द्वारा वर्षा जल को संचित किया जा सकता है। हिमाचल में यह प्रणाली विशेष रूप से फायदेमंद है क्योंकि यहाँ वर्षा सीमित अवधि में होती है।

3. **मल्चिंग और मिट्टी संरक्षण तकनीकें** – जैविक या प्लास्टिक मल्च से नमी का संरक्षण होता है तथा जल वाष्पीकरण में कमी आती है। समोच्च हल चलाना (कंटूर प्लाउइंग), पट्टी फसल विधि (स्ट्रिप क्रॉपिंग) तथा श्रेणी निर्माण द्वारा (टेरेसिंग) जल संरक्षण किया जाता है तथा मृदा अपरदन की रोकथाम संभव होती है।

4. **जलग्रहण क्षेत्र विकास** – सम्पूर्ण गाँव या क्षेत्र के जल, मृदा और वन संसाधनों का एकीकृत प्रबंधन।

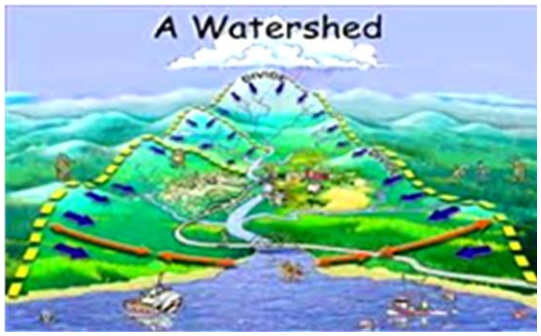

5. **जलवायु आधारित कृषि परामर्श** – रिमोट सेंसिंग और मौसम पूर्वानुमान आधारित मोबाइल संदेशों से किसानों को सलाह दी जाती है कि कब कौन सी फसल लगानी है, कब सिंचाई करनी है, और कौन सा कीटनाशक प्रयोग करना है। ग्रामीण कृषि मौसम सेवा योजना, जो भारतीय मौसम विभाग और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की एक संयुक्त पहल है, के अंतर्गत कृषक विज्ञान केंद्रों में जिला कृषि मौसम इकाइयाँ स्थापित की गई हैं, ताकि किसानों की आवश्यकताओं को जिला और ब्लॉक स्तर पर पूरा किया जा सके।
6. **जल उपयोग दक्षता बढ़ाना** – कम पानी में अधिक उत्पादन वाली फसल किस्मों का लगाना जल प्रबंधन का सही तरीका है। गहरी जुताई, जैविक खाद और फसल चक्र से मिट्टी की जलधारण क्षमता बढ़ाई जाती है।
7. **संरक्षण कृषि** – एक सतत कृषि पद्धति है, जो तीन मुख्य सिद्धांतों पर आधारित है– न्यूनतम मिट्टी जुताई, स्थायी मिट्टी आवरण और फसल विविधीकरण। संरक्षण कृषि, मिट्टी में नमी संरक्षण, सतही बहाव में कमी, जल उपयोग दक्षता में सुधार और सिंचाई की जरुरत को कम करने के लिए कई तरह की प्रथाओं को अपनाती है। संरक्षण कृषि जल संसाधनों के संरक्षण, सिंचाई लागत में कमी तथा जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से निपटने में एक प्रभावी और टिकाऊ समाधान है।
8. **सूखा सहिष्णु फसलें** – क्षेत्र की जलवायु के अनुसार उपयुक्त फसल उगाने से किसान को प्रति बूँद अधिक फसल प्राप्त होगी।
9. **पारंपरिक जल स्रोतों का पुनर्जीवन** – पारंपरिक जल स्रोतों को पुनर्जीवित कर जल संग्रहण क्षमता बढ़ाई जा सकती है। यह जल सिंचाई और पीने के पानी हेतु उपयोग में लाया जा सकता है।
10. **एकीकृत कृषि प्रणाली** – जलवायु के अनुसार कृषि, बागवानी, पशुपालन, मछली पालन, और वानिकी का मिश्रण अपनाकर जोखिम को कम किया जा सकता है।
11. **खेत की समतलीकरण** – लेजर तकनीक से समतल खेतों में सिंचाई समान रूप से होती है, जिससे पानी की बर्बादी कम होती है और नमी बनी रहती है।
12. **सरकार और अनुसंधान संस्थानों की भूमिका** – चौधरी सरवन कुमार हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय, पालमपुर और यशवंत सिंह परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, सोलन जलवायु अनुकूल कृषि तकनीकों पर शोध कर रहे हैं। प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना, राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन मिशन, अटल भूजल योजना और महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के अंतर्गत जल संरक्षण कार्य किए जा रहे हैं।

किसानों के स्तर पर प्रबंधन (जल संरक्षण)– जल संरक्षण में किसान की एक प्रमुख भूमिका है क्योंकि कृषि के लिए पर्याप्त मात्रा में ताजा पानी की जरूरत होती है तथा किसान अगर पानी का संरक्षण निम्नलिखित तरीकों से करें तो पर्याप्त मात्रा में जल संरक्षण किया जा सकता है।

पानी का संग्रहण करना – खेत, तालाब, चेक–डैम, क्यारी टैंक और प्लास्टिक टैंक के माध्यम से वर्षा जल संग्रहण किया जा सकता है। पहाड़ी क्षेत्रों में 10–20 प्रतिशत वर्षा जल का संग्रह भी सिंचाई के लिए पर्याप्त सिद्ध हो सकता है।

सिंचाई निर्धारण करना– किसान मौसम भविष्यवाणी का उपयोग सिंचाई निर्धारण करने के लिए कर सकता है। साथ ही मिट्टी और पौधों की निगरानी करते हुए वर्तमान परिस्थितियों के अनुसार सिंचाई की योजना बना सकते हैं। किसान रात के समय बाढ़ सिंचाई करें, जिससे वाष्पीकरण कम होगा और पानी मिट्टी में गहराई तक रिसेगा।

मृदा प्रबंधन– उचित मृदा प्रबंधन जल संरक्षण के लिए महत्वपूर्ण है। यह मिट्टी को पानी अवशोषित करने तथा फसलों तक पहुँचाने में मदद करता है। रसायन का उपयोग खेतों में कम से कम करना चाहिए क्योंकि यह रसायन मिट्टी के पानी सोखने की क्षमता को कम कर देते हैं।

आवर्ती चराई – पशु चारगाह समय–समय पर बदलना चाहिए। अच्छे चराई प्रबंधन से खेतों की जल अवशोषण क्षमता बढ़ जाती हैं और पानी उपवाह कम हो जाता है।

जल–स्त्रोत विभाजक स्प्रिंग शेड– स्प्रिंग शेड क्षेत्र में वर्षा जल का सतही बहाव (अपवाह) कम हो जाता है जिससे अधिक मात्रा में पानी भूमिगत जल्स्तरों में जमा हो जाता है और इससे स्प्रिंग के जल प्रवाह में वृद्धि होती है । बढ़ता हुआ मानवीय दबाव और जलग्रहण क्षेत्र में गिरावट स्प्रिंग के सुखने का प्राथमिक कारण हैं। यदि हम स्प्रिंग शेड क्षेत्रों में कम से कम घर बनाएं, पेड़–पोधौं को ना काटे तथा स्प्रिंग शेड़ क्षेत्र को बढ़ा दें तो हम स्प्रिंग शेड का संरक्षण कर सकते हैं।

जल संरक्षण हेतु पारंपरिक व आधुनिक तकनीकें–

- ☞ परिरेखा कंटूर ट्रेंचिंग, समोच्चरेखा बांध, मेड और कुंड पद्धति।
- ☞ वाटरशेड प्रबंधन, स्प्रिंग शेड संरक्षण, घूर्णी चराई और जैविक खाद का प्रयोग।

फसल आधारित रणनीतियाँ – कम जल वाली, सूखा सहिष्णु किस्में अपनाना।

- ☞ फसल चक्र और मिश्रित खेती।
- ☞ बीज आलू, अदरक और बेमौसमी सब्जियों के लिए उपयुक्त कृषि जलवायु का लाभ उठाना।

स्वस्थानी वर्षा जल संरक्षण यथास्थान

- ☞ चौड़ी प्रणाली एवं कुंड पद्धति
- ☞ मेड़ एवं कुंड पद्धति
- ☞ परिरेखा (कंटूर) ट्रेंचिंग
- ☞ सीढ़ीनुमा खेत एवं समोच्च बंधन
- ☞ समोच्चरेखित बाँधकरण

बाहरी स्थल पर जल संग्रहण – खेत तालाब, चेक–डैम, नाहर कमांड क्षेत्र में जल प्रबंधन

1. **खेत तालाब –** खेत के निचले भाग में या अलग भूखंड पर मिट्टी या कंक्रीट से तालाब बनाकर वर्षा जल संग्रहित करें। इसमें पॉलिथीन लाइनिंग का उपयोग किया जा सकता है ताकि पानी का रिसाव कम हो।
2. **झीलें एवं जलाशय –** सामूहिक या पंचायत स्तर पर बड़े जलाशयों का निर्माण।

3. **नालों–नालियों से जल का डायवर्जन** – खेतों, छतों से बहकर आने वाले जल को पाइपों या चौनलों के माध्यम से एक संग्रहण संरचना (तालाब, टैंक) तक पहुँचाया जाता है।
4. **चेक डैम का निर्माण** – ढाल वाले क्षेत्रों में छोटे–छोटे बाँध बनाकर बहते जल को रोककर एकत्र करना।
5. **रूफ टॉप रेन वॉटर हार्वेस्टिंग का बाह्य उपयोग** – बाद में कृषि या अन्य उपयोगों में लाना।

केस अध्ययन – हिमाचल प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में जल संसाधन और कृषि पर आधारित अध्ययन।

1. **सलोल क्षेत्र, कांगड़ा** – कांगड़ा के सलोल क्षेत्र में किए गए अध्ययन में भौगोलिक सूचना प्रणाली तकनीक और स्प्रिंगशेड पद्धति का उपयोग करते हुए भूजल संभाव्यता क्षेत्रों की पहचान की गई। साथ ही, जल पुनर्जीवन के हाइड्रोलॉजिकल और सामाजिक–आर्थिक प्रभावों का भी मूल्यांकन किया गया।
2. **मन्न गांव, हमीरपुर** – हमीरपुर जिले के मन्न गांवों में वर्षा जल संचयन प्रणालियों की व्यवहार्यता का आकलन किया गया, जो व्यक्तिगत किसानों और समुदायों के लिए उपयोगी साबित हुई। अध्ययन में जल आपूर्ति में सुधार और फसल विविधिकरण की संभावनाएं भी सामने आई।

पानी का संग्रह – उदाहरण के लिए अगर किसान के पास 50 हेक्टेयर भूमि है जो लगभग 5 लाख वर्ग मीटर के बराबर है और वहां सालाना वर्षा 1200 मिली लीटर होती है तो लगभग उस का 60–70 प्रतिशत वर्षा का पानी वाष्पीकरण के रूप खत्म होता है। अगर उस वर्षा के पानी का लगभग 10–20 प्रतिशत पानी (120 मि.मी.) को इक्टठा किया जाए तो यह पानी का संग्रह 120 लाख लीटर पानी के बराबर होता है जो लगभग सब्जी की खेती में 4–6 व गेहूं आदि फसलों में 2–3 सिंचाई के लिए पानी उपलब्ध करवा सकता है। यदि सिंचाई की विधियां ड्रिप सिंचाई या बौछार सिंचाई हो तो इस पानी से 10 हेक्टेयर में 10–15 बार सिंचाई की जा सकती है इसलिए किसान अपने स्तर पर जल संग्रह का उचित प्रबंध कर अपनी खेती की पैदावार बढ़ा सकते हैं। 10 लाख लीटर पानी के संग्रह के लिए 12 ग् 12 ग् 12 मीटर का टैंक बनाने की आवश्यकता होती है। यह एक साधारण गणना होती है। एक क्यूबिक मीटर टैंक में लगभग 1000 लीटर पानी का संग्रहण किया जा सकता है। कुछ एक क्षेत्रों में वर्षा के पानी का लगभग 25 से 30 प्रतिशत भाग का संग्रहण किया जाता है, परन्तु पहाड़ी क्षेत्र ढ़लान दार होने से पानी का अपवाह ज्यादा हो जाता है। यह कार्य हल्की ढ़लान से समतल क्षत्रों में और अच्छे से किया जा सकता है।

हिमाचल प्रदेश की कृषि प्रणाली जलवायु परिवर्तन की चपेट में है। ऐसे में आवश्यक है कि पारंपरिक ज्ञान को आधुनिक विज्ञान से जोड़ा जाए। वैज्ञानिक जल प्रबंधन तकनीकों को अपनाकर हम जल संरक्षण को बढ़ावा दे सकते हैं और कृषि की स्थिरता एवं उत्पादकता बनाए रख सकते हैं। किसानों को जागरूक करना, उन्हें प्रशिक्षण देना और

सरकार की योजनाओं से जोड़ना भविष्य की दिशा में महत्वपूर्ण कदम होंगे। तभी हिमाचल की हरियाली, सेब की मिठास और किसानों की मुस्कान बनी रह सकेगी।

"अगर जल है तो कल है। विज्ञान और परम्परा का संगम ही कृषि का सशक्त भविष्य है"।